लद्दाख का सांस्कृतिक महत्त्व

- लेखक : DAKSHIN KOSAL TODAY DESK
- तारीख : August 29, 2025

अपनी भौगोलिक स्थिति एवं सामाजिक परम्पराओं के कारण लद्दाख विश्वविख्यात है। भारत चीन के 1962 के युद्ध के उपरान्त भारत सरकार का ध्यान इस संभाग के विकास की ओर गया किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि ऐतिहासिक एवं सांस्दकृतिक दृष्टि से यह संभाग उपेक्षित था। ए०एम० कैके एवं अलक्जेंडर कनिंघम आदि पाश्चात्य विद्वान राहुल सांस्कृत्यापन जैसे भारतीय विद्वान तथा फाह्यान और हवेन त्सांग जैसे चीनी तीर्थयात्रियों ने इस संभाग की यात्राएं की हैं।

यही नहीं सातवीं शताब्दी से 12वीं शताब्दी तक हमारे देश का तिब्बत से सांस्कृतिक संबंध रहा है। इस बीच अनेक भारतीय और तिब्बती पंडित एक दूसरे के देशों में गए थे शांतिरक्षित और कमलशील तांत्रिका आचार्य पद्मसंभव जैसे विद्वान लद्दाख के मार्ग से ही तिब्बत गये थे। आचार्य पदमसंभव की मूर्ति आज लद्दाख के सभी बौद्ध विहारों में देखने को मिल जाएगी। इससे लद्दाख का सांस्कृतिक महत्त्व स्वतः स्पष्ट हो जाता है।

लद्दाख बौद्ध बहुल क्षेत्र है। यह भारत के पश्चिमोत्तर में स्थित है। पालि के ग्रंथ समन्तपासादिका एवं महावंस के अनुसार मोग्गलिपुत्ततिस्स की अध्यक्षता में सम्पन्न तृतीय संगति के बाद सम्राट अशोक ने धर्म मर्मज्ञ आचार्यों को पर्म प्रचारार्थ चतुर्दिक भेजा। आचार्य मण्झान्तिक कश्मीर और गंधार और मझिम नामक भिक्षु हिमवान प्रदेश में गये। अशोक के बाद भारत का यह पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश मिलिन्द और कनिष्क के आधिपत्य में रहा। ये दोनों शासक बौद्धानुयायी थे।

जंस्कार में 'कनिक' नाम से शिलालेख मिला है जिसके कनिष्क कालीन होने की संभावना है। स्पष्ट है कि इस संभाग का बौद्ध धर्म से संबंध काफी पुराना है। चीनी यात्रियों के विवरण भी यहां बौद्ध धर्म की अक्षुण्णता में साक्ष्य हैं। आज लद्दाख में प्रवेश करते ही मार्ग में छोदतेन (स्तूप) और प्रत्येक गांव में गोन्पा (बौद्ध विहार) दिखाई देगी जिससे यात्री चारों तरफ बौद्ध वातावरण पाता है।

इस प्रकार लद्दाखी संस्कृति को बौद्ध संस्कृति कहें तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। यदि कोई महायानी संस्कृति को साक्षात

रूप में देखना चाहता है तो लद्दाख में उसके दर्शन किये जा सकते हैं। लद्दाख की सीमा में प्रवेश करते ही स्तूपों के दर्शन होते हैं। लद्दाखी इनकी परिक्रमा शुभ मानते हैं। स्तूप को लद्दाखी में 'छोदतेन' कहते है। 'छोद' का अर्थ है स्तुति और 'तेन' का अर्थ है आधार। इनमें धार्मिक वस्तुओं, महापुरुषों अथवा लामाओं (भिक्षुओं) की अस्थियां ग्रंथ एवं अनाज के अंश रखे जाते हैं।

छूत अति भंयकर रोगों एवं अकाल आदि विपदाओं को रोकने के लिए 'छोदतेन' का निर्माण किया जाता है। इनका निर्माण लदादख में कनिष्क काल से आरंभ माना जाता है। जंस्कार में कनिष्क के समकालीन एक स्तूप को देखा जा सकता है। इस स्तूप के सिंहासन पर कलश चित्रित है। मेरे मित्र डा० प्रेमसिहं जीना 'वरिष्ठ प्राध्यापक' केन्द्रीय बौद्ध विद्या संस्थान, लेह-लद्दाख ने मुझे बताया कि चंगतंग क्षेत्र के 'तेरी' गांव के लोगों के अनुसार वहां निर्मित स्तूप अशोक द्वारा बनवाया गया।

गांव के लोगों की इस अनुभूति से स्पष्ट है कि लद्दाख में स्तूप का निर्माण सम्राट अशोक के समय से ही प्रारंभ हो गया होगा। कालान्तर में महायान बौद्ध धर्म के उदय के साथ-साथ लद्दाख के ग्रामों के एवं विहारों के समीप स्तूप का निर्माण तिब्बती शिल्पकला पद्धति से किया जाने लगा। इन छोदतेनों (स्तूपों) की संपूर्ण लदाख में देखा जा सकता है।

स्तूपों के साथ-साथ पत्थरों पर "ॐ मणि पदमे हूं" मंत्र उत्कीर्ण होते हैं। इस मंत्र का अर्थ साधारण लोग नहीं जानते क्योंकि इसका अर्थ भी साधारण नहीं है। मैंने एक अनपढ़ व्यक्ति से पूछा कि इस मंत्र का क्या अर्थ है ? उसने इतना ही कहा कि इसका अर्थ बड़ा गंभीर है किंतु गंभीरता को समझा नही सका। दूसरे दिन मैंने केन्द्रीय बौद्ध विद्या संस्थान लेह-लद्दाख के प्राचार्य श्री उशी पलजोर से पूछा तो उन्होंने बताया कि "ॐ मणि पदमे हूं" आर्य अवलोकितेश्वर का नाम है। ये करुणा के देवता हैं।

इस मंत्र का अर्थ है' हे हाथ में मणि और पदम धारक सिद्धि दो।' इस मंत्र में छः पद है।' ओम' देवताओं 'म' राक्षसों का 'णि' मनुष्यों का 'पद' पशुओं का 'में' प्रेत का तथा 'हूं' नरक का प्रतीक है। इस मंत्र का जप करने से पूर्व साधक को प्रमाणित गुरू से आर्य अवलोकितेश्वर का अभिषेक लेना पड़ता है। लामा और बौद्ध उपासक दोनों ही अपने हाथ में मणि चक लिये रहने हैं। उस पर ये 'मणि पदमे हूं' का मंत्र लिखा रहता है।

जिस प्रकार माला जपने वाले उनके दानों को घुमाते हैं, उसी प्रकार ये लामा भी अपने इन मणि चक्रों को जिसमें नीचे काष्ठ दण्ड लगा रहता है, घुमाते रहते है जिससे मंत्रों की अगणित आवृत्तियां हो जाती हैं। यह भी कहा जाता है कि लद्दाख में अपराधी से "ऊं. मणि पदमे हूं" आदि मंत्रों को सजा के रूप में पत्थरों पर उत्कीर्ण कराया जाता था। इस मंत्र के अतिरिक्त वज्रपाणि मंजुत्री और आचार्य पदमसंभव आदि के मंत्र भी पत्थरों पर उत्कीर्ण मिलते है, यथा 'ऊं' वज्रपाणि हूं 'ऊं वागिश्वरे हूं, 'ऊं' वज्रगुरू पदमसिद्धि हूं।' इसके अतिरिक्त धारणी और सूत्र भी पत्थरों पर यत्र तत्र उत्कीर्ण मिलते हैं।

पिछली शताब्दियों में तांत्रिक पद्धति भारतीय धर्म साधना का प्रमुख तत्व रही है। इसमें बौद्ध, शैव एवं शाक्य अग्रगण्य है। शैव एवं शाक्य मत में 'तंत्र 'शक्ति का प्रतीक है जबकि बौद्धों के अनुसार सांस्कृतिक दृष्टि से विभिन्न जातियों के विश्वासों को समन्वित करने का तंत्र एक प्रमुख माध्यम रहा है। चौद्ध सिद्धों के तांत्रिमा प्रभाव के कारण ही उनमें तथा आगे के विकसित नाथ और संत परम्परा में विभिन्न जातियों के लोग स्थान पा सके।

भारत के इस सीमान्त संभाग लद्दाख में बौद्धों ने शताब्दियों पूर्व इस तांत्रिकता को अंगीकार कर लिया था। यहां इसकी चर्चा करना प्रासंगिक होगा। लद्दाख के मतों में बुद्ध और बोधिसत्वों की प्रतिमाओं के अतिरिक्त ऐसी मूर्तियां भी रखी जाती हैं, जो अश्लील, वीभत्स तथा कामवासना को उत्तेजित करने वाली हैं।

राहुल सांस्कृत्यायन ने लामा चूरू के मठ का वर्णन करते हुए लिखा है कि "एक ओर शाक्य मुनि तथा महायान सम्प्रदाय के अनेक बोधिसत्य तथा देवी-देवता हैं। बायें कोने में छोटे मंदिर के अंदर मैथुनरत 'छेन्दोग-यव-युग्म तथा दूसरे वाममार्गी देवताओं की मूर्तियां हैं। बाई और अनेक भ्रष्ट देवी-देवताओं की मूर्तियां हैं।" भगवान बुद्ध की पवित्र शिक्षा यहां आकर कहां से कहां पहुंच गई। दर्शक इन मूर्तियों को देखकर चकित हो जाता है कि करुणावतार बुद्ध के धर्म में ऐसी भवावह मूर्तियों का प्रचलन कैसे हो गया।

लद्दाख के बौद्ध मठों में बुद्ध मूर्ति के पास घी के दीपक रात दिन जलते हैं। उपासना गृह में देव मूर्तियों के समीपस्थ अष्टमंगल रखे जाते हैं- शंख, चंक्र, श्रीवत्स का चिन्ह, पद्म, कलश, मत्स्य, छत्र तथा ध्वज रहते हैं। इनमें शंख सौभाग्य अथवा जीवन की धन्यता और सुमार्ग पर मुड़ने का प्रतीत है, चक्र धर्म की गति का, जो पूर्णता की ओर ले जाता है। इसके बीच आठ धुरे अष्टांगिक मार्ग के प्रतीक हैं। श्रीवत्स बुद्धों के श्रेष्ठ तथा पूर्ण ज्ञान की उपलब्धि का चिन्ह है। पद्म पवित्रता का सूचक है।

इसी प्रकार कलश समृद्धि का बोध समृद्धि का बोध कराता है। मत्स्य प्रसन्नता तथा उपयोगिता का प्रतीक है। कुछ लोग इन्हें भव सागर को पार करने का प्रतीक मानते हैं। छत्र कष्टों से मुक्ति का अथवा बुरे विचारों की तीव्र गति से पृथक रखने का प्रतीक मानते हैं ध्वज शाश्वत आनंद का।

उपासना की वेदी पर कुछ अन्य वस्तुएं भी रखी जाती हैं, यथा- पात्र, तूर्य, फूल मणिचक्र, पुस्तक, वज्र, स्तूप, घंटिका, दर्पण (सीसे का नहीं अपितु धातु का), मंत्रों से अभिमंत्रित जल पात्र। इस पात्र में मयूर पंरात्र अथवा कुश के टुकड़े पड़े रहते हैं, जिनसे यह जल छिड़का जाता है। लाल टोपी वालों के महों में उपासना केंदी पर मानव कपाल भी एक धातु के डिब्बे में रखा रहता है। कहीं-कहीं मद्यपान भी रखा रहता है।

लद्दाख के लगभग प्रत्येक गांव में गोन्पा होती है। गोन्पा का अर्थ बौद्धविहार अथवा बौद्ध मठ अथवा बौद्ध मंदिर है। हेमिस लद्दाख भी सबसे सम्पन्न गोन्पा है। अलची सबसे पुरातन गोन्पा है जबकि हरी-जोड् गोन्पा बौद्ध विनय के पालन के लिए सुप्रसिद्ध है। इन गोन्पाओं के आस-पास अनेक वन्य पशु एवं पक्षी रहते हैं, जो अवध्य हैं। इस दृश्य को देखने पर 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' में वर्णित महर्षि कच्च के आश्रम का स्मरण हो आता है, जहां विश्वास के कारण मृग अपनी स्वाभाविक गति को छोड़ आवाज को सह लेते हैं-"विश्वासोपगमादभिन्नगतयः शब्दं सहन्ते मृगाः"।

लद्दाखी संस्कृति का सबसे महत्वपूर्ण तत्व वहां के नृत्य एवं गीत हैं। यद्यपि नृत्य तथा गीत मानव के आह्लाद का बाह्य प्रदर्शन है, तो भी नृत्य की विभिन्न मुद्राओं से उस समाज की संस्कृति तथा इतिहास का पता चलता है। लद्दाख में स्त्री और

पुरूष सामूहिक रूप से नृत्य करते हैं और अलग-अलग भी। सामूहिक नृत्य में एक पुरुष और स्त्री क्रमशः खड़े होते हैं। नृत्य पैरों को जमीन में पटक कर तथा उससे ताल, द्रुतताल तथा ठुमरी आदि गीतों के लय से मिलाप करना होता है।

यहां के कुछ गीत कथोपकथन के रूप में उपदेशात्मक भी होते हैं। एक उपदेशात्मक गीत का आशय उदाहरण के रूप में प्रस्तुत है, लड़कियां भेड़ चराने वाले लड़कों से पूछती हैं-

तुम स्कूल क्यों नहीं जाते ?

लड़के उत्तर देते हैं-

वहां अध्यापक पीटते हैं और मुर्गा बनाते हैं। इस पर लड़कियां उन्हें समझाती हुई कहती हैं कि-

यदि तुम पढ़ोगे तो अध्यापक नहीं मारेंगे और न मुर्गा बनाएंगे।

हम रोजाना पढ़ने जाते हैं। पढ़-लिख कर अच्छे आदमी बनते हैं।

इसके अतिरिक्त प्रेम, विरह, बिछोह, छङ् पीते समय, छङ् पीने वाले के लिए मनोरंजनार्थ गीत, कुछ गीत प्रेमी रंग-बिरंगी पोशाकों में सुसज्जित स्त्रियां ऐसी प्रतीत होती हैं मानों वे इन्द्र की परियों के समान हों।

गीत का नमूना प्रस्तुत है:-

यक स्कर्मा जुम्बरि यक्। सरिमी परतुत शर्ति यत् ॥

(आज सिर में तारा आज)। (प्रकाशित हो रहा है आज)

यर्मे चोड़ा गङ् वियक्। चोड़ा शुभ शुभ सर्वि गह।

(पूर्ण चन्द शोभित है आज)। (चांद तीन-तीन शोभित हैं आज) ॥

दिरिङ् डिली डे लम्पों जङ्बो मोह।

(आज नींद में स्वप्न सुंदर देखा)

(छङ् जर्जी से बनाई जाती है। इसमें कोई मादक द्रव्य मिलाया जाता है। विशेष अवसरों पर लद्दाखी छङ् पीकर नाचते और गाते हैं।) दर्क-स्पोन्यो पल्या थोड्ङ्। (मैंने स्वामी सुंदर देखा)

लै अङ्यो ग्र्न्यचिङ् यल्या थोड् (देवता अति सुंदर देखा।)

दर्क-स्योन्यो जङ्यो सेईं स्क्यूब्लुक्स। (मेरे जैसे स्वामी सुंदर ने आसन स्वीकार किया)।

बुचां ड़ालां चक्सु फुल ॥

(बालक हम खड़े हैं हाथ जोड़)

लद्दाखी नृत्य भिन्न-भिन्न अवसरों पर किये जाते हैं। वर्गीकरण के रूप में इन्हें इस प्रकार दर्शाया जा सकता है:-

1. पूचा स्वेस- इसमें 7,9,11 तक युवक अपनी परम्परागत वेशभूषा एवं आभूषणों से सुसज्जित हो दोनों हाथों में चादर उठाकर ऐसे फैलाकर तथा झूमते हुए नृत्य करते हैं।

2. पोमो स्त्रेस-पोमा स्वेस में लड़कियां अपनी परम्परागत लद्दाखी वेशभूषा एवं आभूषणों को धारण कर लोकपा को बाई ओर बांधकर अपने बांयें पैर को आगे बढ़ाते हुए नृत्य करती हैं।

3. कोन्पा सुमसेक-इसमें लड़के और लड़कियां एक साथ मिलकर दो कदम आगे बढाकर तथा तीसरे को आधा जमीन से स्पर्श कराते हुए आगे सरकाते हैं। वे अपनी कलाइयों एवं मुट्ठियों को आगे पीछे हिलाते, खोलते तथा बंद करते हुए नृत्य करते हैं।

4. सोनडोल स्वेस-इस नृत्य में लड़कियां अथवा युवतियां एक पंक्ति में खड़ी हो जाती हैं, ये अपने हाथों में पहने हुए कंगनों को कलाई पर बजाते हुए 'जूले' कहने के बाद नृत्य करती हैं।

5. टप्शी ग्पूर-यह मंगल गीत के साथ विवाहित स्त्रियों एवं पुरुषों द्वारा किया जाता है।

6. छबस्कवाङ्-इस नृत्य में लद्दाखी नर्तक एवं नर्तकियां अपने सिरों पर एक विशेष बर्तन रखकर नृत्य करती है।

7. शीन स्वेस यह नृत्य लद्दाखों किसानों द्वारा अपने खेतों से फसल बोने, काटने और महाई करने के अवसर पर किया जाता है।

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि लद्दाख का सांस्कृतिक महत्व असंदिग्ध है। प्रतिवर्ष अनेक पर्यटक लद्दाख के सांस्कृतिक वैभव से आकर्षित होकर इस संभाग की यात्रा करते हैं। पर्यटकों के आगगन पर यहां के युवक एवं युवतियां इनके मार्गदर्शक के रूप में कार्य करते हैं जिससे इन्हें काफी धनराशि प्राप्त हो जाती है।

पर्यटक यहां की जनता की आप का स्रोत अवश्य हैं किन्तु यहां के युवक एवं युवतियां उनके प्रभाव से पाश्चात्य सभ्यता के रंग में न रंगे तो इससे लद्दाख की सांस्कृतिक विरासत अक्षुण्ण रहेगी। अपनी सांस्कृतिक विरासत की रक्षा करना यहां के इन युवक एवं युवतियों का कर्तव्य है।

डा० सत्यदेव कौशिक
लद्दाख का सांस्कृतिक महत्त्व
"संस्कृति: अंक-04 "